ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 2, Issue 2, February 2012 Impact Factor 2.809 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

"स्वातत्र्य पूर्व हिन्दी उपन्यासों में स्त्री - विमर्श का स्वरूप"

विनायक लोहानी
(शोधार्थी)
नव नालंदा महाविहार (मानित)
विश्वविद्यालय, नालंदा

'हिन्दी उपन्यास का इतिहास' नामक अपने शोधपूर्ण ग्रन्थ में विद्वान लेखक डॉ° गोपाल राय लिखते हैं- "यह एक रोचक तथ्य है कि हिन्दी उपन्यास का आरंभ 'स्त्री-विमर्श' से हुआ तथा आजादी-पूर्व के उपन्यासों में किसानों के बाद स्त्री की समस्याओं को ही प्रमुख स्थान मिला। इसका कारण उपन्यासकारों का नवजागरण की चेतना से प्रभावित होना था। पर उस समय के पुरुष उपन्यासकारों ने परम्परागत नारी-संहिता के चौखटे में ही स्त्री के उद्धार की बात की। स्त्री के लिए उस घेरे के बाहर निकलने का कोई द्वार नहीं था।"[१]

पंडित गौरीदत्त द्वारा १८७० ईसवी में लिखित 'देवरानी-जेठानी की कहानी' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास होने का गौरव प्राप्त है। इस संबंध में डॉ° गोपाल राय लिखते हैं - "चूँकि यह हिन्दी की पहली मौलिक, कल्पना प्रसूत कथा-पुस्तक थी, और इसमें समकालीन नारी की सामाजिक - पारिवारिक स्थिति ही लेखक की चिन्ता का विषय थी, अतः यह अनायास ही उपन्यास के बहुत निकट पहुँच गयी, यद्यपि उस समय तक उपन्यास शब्द हिन्दी में नोवेल के अर्थ में अप्रचलित था। अतः विवेक सम्मत रुप में 'देवरानी-जेठानी की कहानी' को ही हिन्दी उपन्यास का प्रस्थान बिन्दु मानना समीचीन है।"[२]

'देवरानी-जेठानी की कहानी' स्त्री-विमर्श से जुड़ी हुई हिन्दी उपन्यास की प्रथम कृति है। यह कथा-पुस्तक पुनर्जागरण की चेतना से सीधे जुड़ी हुई रचना थी। पुनर्जागरण ने भारतीय समाज के जिस पक्ष को सबसे अधिक झकझोरा था, वह उसका नारी-विषयक दृष्टिकोण और उसके प्रति उसका व्यवहार था।

इस तरह स्त्री उद्धार का प्रश्न तत्कालीन भारतीय नवजागरण का प्रमुख मुद्दा होने के कारण उस युग के प्रबुद्ध कथा-लेखक पंडित गौरीदत्त का ध्यान लड़कियों की शिक्षा की ओर गया। फलतः 'देवरानी-जेठानी की कहानी' के रुप में सजग कथाकार ने स्त्री के बेहतर रुप की जो अभिनव कल्पना की, वह उस समय के समाज को देखते हुए बहुत प्रगतिशील थी। विधवा-विवाह के प्रति पढ़ा-लिखा समाज सहानुभूति प्रकट करने लगा था। 'देवरानी-जेठानी की कहानी' में समाज की इस बदलती मानसिकता का सफल अंकन हुआ है। यहाँ कथाकार स्वयं प्रच्छन्न रुप में विधवा-विवाह के समर्थन में खड़ा दिखाई देता है - "जिस स्त्री का उसके पति से सम्भाषण नहीं हुआ और विवाह के पीछे पति का देहांत हो जाए वह पुनर्विवाह के योग्य है। अर्थात् उस स्त्री का दूसरा विवाह कर देने में दोष नहीं।"[३]

प्रस्तुत उपन्यास की पात्रा 'जेठानी' के चरित्र द्वारा कथाकार ने तत्कालीन स्त्रियों में व्याप्त अशिक्षा, अन्धविश्वास, कलह, अज्ञान आदि का विश्वसनीय अंकन किया है। इस तरह 'देवरानी-जेठानी की कहानी' में युगीन 'स्त्री-विमर्श' के विभिन्न पहलुओं पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है।

'देवरानी-जेठानी की कहानी' की रचना के बाद सन् १८७२ ईसवी में 'वामा-शिक्षक' कथा-पुस्तक की रचना हुई, जिसका प्रकाशन ग्यारह वर्षों बाद सन् १८८३ ईसवी में हुआ। 'वामा-शिक्षक' कथा-पुस्तक के लेखक द्वय-ईश्वरी प्रसाद और कल्याण राय हैं। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक द्वय का दृष्टिकोण सुधारवादी और नवजागरण की चेतना के अनुरुप है।

स्त्रियों की शिक्षा पर 'वामा-शिक्षक' कथा-पुस्तक में विशेष बल दिया गया है, क्योंकि समकालीन प्रबुद्ध समाज अब अनुभव करने लगा था कि समाज का सुधार स्त्रियों की शिक्षा से ही संभव है। इसमें पात्रों के वार्तालाप द्वारा स्त्री-शिक्षा के विरोध में दिये जाने वाले सभी तर्कों का खंडन किया गया है और स्त्री-शिक्षा को समाज की प्रगति के लिए आवश्यक सिद्ध किया गया है। लेखक द्वय ने प्रस्तुत कथा-पुस्तक में बाल-विवाह का विरोध एवं विधवा विवाह का पुरजोर समर्थन किया है।

कथा-पुस्तक में स्त्रियों के स्वावलम्बी बनने पर भी बहुत जोर दिया गया है। कथा-पुस्तक की एक स्त्री-पात्र विपत्ति पड़ने पर टोपियाँ बनाकर और कलाबत्तू का काम करके परिवार का खर्च चलाने में सफल होती है। इस तरह 'वामा-शिक्षक' कथा-पुस्तक भी 'स्त्री-विमर्श' से संबंधित कृति है।

'वामा-शिक्षक' की रचना के पाँच वर्ष बाद सन् १८७७ ई॰ में श्रद्धाराम फिल्लौरी ने 'भाग्यवती' की रचना की। प्रस्तुत कथा-पुस्तक में अशिक्षा के कारण मध्यवर्गीय परिवारों की स्त्रियों की हीनदशा का मार्मिक अंकन किया गया है। भाग्यवती की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें पहली बार स्पष्ट रुप से विधवा-विवाह का समर्थन किया गया था, जिसे उस समय का रुढ़िवादी हिन्दू समाज मानने को तैयार न था। फिल्लौरी जी ने 'भाग्यवती' में बाल-विवाह का भी जोरदार विरोध किया है। यों तो 'भाग्यवती' में नवजागरण या नयी रोशनी के अनेक ज्वलंत पक्ष प्रस्तुत किये गये हैं, पर स्त्री-शिक्षा के बाद स्त्रियों के लिए स्वावलम्बन की जरुरत पर विशेष बल देकर कथाकार ने अपनी जागरुकता का सफल परिचय दिया है।

भाग्यवती का चरित्र अविश्वसनीय होने पर भी स्वावलंबन का अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार जन्म से बालकों और बालिकाओं को समान महत्त्व देकर कथाकार ने एक ऐसी जागरुकता का परिचय दिया है जिसकी सार्थकता आज भी महसूस की जा रही है। आज इक्कीसवीं शताब्दी में भी बालक-बालिकाओं के प्रति अमानवीय भेद-भाव जग जाहिर है। दूर दृष्टि सम्पन्न प्रकाण्ड विद्वान कथाकार ने स्त्रियों के लिए व्यायाम करने की भी अनुशंसा की है, जो उस जमाने के लिए एक अनोखी सी बात थी, किन्तु आज लड़कियों को निर्भीक होने के लिए आधुनिक कर्राटे का प्रशिक्षण लेना कितना आवश्यक हो गया है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। इस तरह 'भाग्यवती' कथा-पुस्तक स्त्री-विमर्श से पूर्णतः सम्बद्ध है।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक सन् १८९३ ईसवी में प्रकाशित कुँवर हनुमन्त सिंह रघुवंशी कृत 'चन्द्रकला' नामक उपन्यास बलात्कार के अंकन की दृष्टि से हिन्दी का पहला उपन्यास है। इस उपन्यास में प्रथम बार समकालीन समाज में कच्ची उम्र की बालिकाओं के विधवा होने एवं उनके बलात्कार का शिकार होने और फिर प्रतिकूल परिस्थितियों में वेश्यावृत्ति अपनाने का कारुणिक एवं मार्मिक चित्रण हुआ है। इस संवेदनशील उपन्यास में यह भी दिखलाया गया है कि जो समाज बाल-विवाह का समर्थन करता है, वही बाल-विधवाओं के प्रति कठोर बन कर उन्हें अनेक प्रकार का कष्ट भी देता है।

सन् १८९९ ईसवी में रचित 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' नामक उपन्यास में हरिऔध जी ने ब्राह्मण समाज की वैवाहिक प्रथा के दोषों का चित्रण किया है। इस उपन्यास की देववाला अपनी ही जाति के युवक से प्यार करती है जो हर प्रकार से योग्य होने के बावजूद जाति उपभेद में कुछ हीन होने के कारण उसका पति नहीं बन पाता। देववाला का विवाह जाति शुद्धता के नाम पर एक अयोग्य युवक से कर दिया जाता है, जिसका दुष्परिणाम उसे आजीवन भोगना पड़ता है।

संदर्भः-

१. हिन्दी उपन्यास का इतिहास - गोपाल राय, पृष्ठ ४१८।

२. वही - वही, पृष्ठ २८ ।

३. देवरानी - जेठानी की कहानी - पंडित गौरीदत्त, पृष्ठ ३३१।